प्रवचन-४०, गाथा-४१, शुक्रवार, श्रावण शुक्ला ५, दिनांक १५-०८-१९८०

नियमसार, ४१ गाथा। बहुत सूक्ष्म बात है। कुन्दकुन्दाचार्य ऐसा कहते हैं कि मेरी भावना के लिये मैंने तो बनाया है। तुम सुनो और समझो, यह तुम्हारी स्वतन्त्रता है। मैंने तो मेरी भावना के लिये बनाया है। आहाहा! कहते हैं कि भगवान आत्मा चैतन्यस्वरूप चैतन्यरत्नाकर द्रव्यस्वभाव। यहाँ शुद्धभाव अधिकार है न? शुद्धभाव अर्थात् त्रिकाली शुद्ध-पवित्र परमानन्द का सागर, अमृत का पिण्ड, वह द्रव्यस्वभाव, उसमें चार भाव का अभाव है। आहाहा!

शरीर, वाणी, मन तो दूसरी चीज़ रही। यह रोग और निरोग तो कहीं जड़ में रह गये। आहाहा! समझ में आया? अपनी पर्याय में... चार भाव जो अपनी पर्याय में अपने से स्वतन्त्ररूप से होते हैं, वह पर्याय भी, जिसे सम्यग्दर्शन प्रगट करना है - धर्म की पहली सीढ़ी... आहाहा! उसे इन चार भावों का लक्ष्य छोड़ देना। आहाहा! स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, देश, मकान इन सब पर का लक्ष्य छोड़ देना, वह चीज़ तो दूर रह गयी। यह तो इसकी पर्याय में है—चार भाव इसकी पर्याय में हैं। पंचम भाव द्रव्यभाव है। आहाहा! अरे रे! इन चार भाव में उपशम और क्षयोपशम दो की बात आ गयी।

उपशम के दो प्रकार : समकित और चारित्र आत्मा में नहीं। वे तो पर्याय में हैं। आहाहा! तो पर्यायदृष्टि से जाननेयोग्य है परन्तु आदरने योग्य नहीं। आहाहा! कठिन काम। ऐसे क्षायिक। केवलज्ञान, केवलदर्शन, वह 'है' ऐसा जाननेयोग्य है परन्तु वह भाव द्रव्य में नहीं; इसलिए आदरणीय नहीं। आहाहा! साधक को स्वयं को केवलज्ञान तो है नहीं, परन्तु दूसरे का केवलज्ञान भी अपने को आदरणीय नहीं और अपनी पर्याय में केवलज्ञान होगा, दो तीन भव के बाद होगा, वह भी आदरणीय नहीं, ऐसा कहते हैं। आहाहा! समझ में आया? ये दो बातें हो गयी हैं।

आज **क्षायोपशमिकभाव के अठारह भेद इस प्रकार हैं—मतिज्ञान,...** सम्यक् मतिज्ञान। है? **क्षायोपशमिकभाव के अठारह भेद...** मतिज्ञान जो अपने में नहीं। सेठ को हाथ नहीं आया। ४१ गाथा। **मतिज्ञान,...** जो गणधरदेव मतिज्ञान से और मतिपूर्वक श्रुतज्ञान से बारह अंग की रचना करते हैं। आहाहा! वह मतिज्ञान भी अपने द्रव्यस्वभाव में नहीं है और मतिज्ञान का आश्रय करनेयोग्य नहीं है। अरर! समझ में आया?

**श्रुतज्ञान,...** पर्याय में बारह अंग का श्रुतज्ञान हो.. आहाहा! परन्तु वह आश्रय करनेयोग्य नहीं है। वह श्रुतज्ञान की पर्याय द्रव्यस्वभाव में नहीं है। जैसे पानी के दल में तेल की बूँद, तेल की चिकनाई ऊपर-ऊपर तैरती है, वैसे भगवान चिदानन्द का सागर अमृत का पूर प्रभु, उसमें यह श्रुतज्ञान की पर्याय ऊपर-ऊपर तैरती है। आहाहा! समझ में आया? सूक्ष्म बात है, भाई! यह श्रुतज्ञान की पर्याय भी अन्दर सम्यग्दर्शन का विषय जो द्रव्यस्वभाव है,... शुद्धभाव है न? वह सम्यग्दर्शन का विषय है, उसमें श्रुतज्ञान का अभाव है। भावश्रुतज्ञान, हों! द्रव्यश्रुतज्ञान तो वाणी है। वह तो वाणी-शब्द है, वह तो जड़ में जाता है। आहाहा! शास्त्र की यह जो रचना है, वह तो जड़ की पर्याय है। उसकी तो यहाँ बात ही नहीं।

अपने में अपने आनन्दस्वभाव का भान भावश्रुत में विकल्प से रहित निर्विकल्परूप से (हुआ)... १४४ गाथा में आया है। श्रुतज्ञान का विकल्प भी छोड़ दे। आहाहा! और श्रुतज्ञान इतना प्रगट हुआ है, उसका लक्ष्य छोड़ दे, उसका आश्रय छोड़ दे। आहाहा! तेरी चीज़ पूर्णानन्द से भरपूर है, उसका यदि आश्रय करना हो, सम्यग्दर्शन-धर्म की पहली सीढ़ी, पहला सोपान यदि तुझे प्रगट करना हो तो उस मतिश्रुतज्ञान का भी द्रव्य में अभाव है। आहाहा! है?

**अवधिज्ञान,...** (का) द्रव्य में अभाव है। पर्याय में रूपी को जाननेवाला अवधिज्ञान हो, वस्तु में नहीं है। वस्तु तो पंचम पारिणामिक ज्ञायकभाव, परम परमेश्वरस्वरूप है। आहाहा! परम परमेश्वर। पर्याय में परमेश्वर केवलज्ञान होता है, यह तो परम परमेश्वर। आहाहा! ऐसा जो भगवान आत्मा, उसमें अवधिज्ञान का भी अभाव है। पर्याय में हो; है, इतना जाननेयोग्य है। आदरनेयोग्य नहीं है, उपादेय नहीं है। आहाहा! अवधिज्ञान उपादेय नहीं है। अरे! प्रभु! तो फिर दया, दान और व्रत के विकल्प उपादेय (कहे), प्रभु! बहुत अन्तर है। आहाहा! वीतरागमार्ग.. प्रभु! बहुत अन्तर है। आहाहा! यह **अवधिज्ञान,...**

**मनःपर्ययज्ञान...** नहीं। यहाँ क्षयोपशम की बात है न? क्षायिक में तो केवलज्ञान आ गया। मनःपर्ययज्ञान। सामनेवाले के मन के भाव भी जान सके, ऐसा मनःपर्ययज्ञान, वह पर्याय में है, वस्तु में नहीं और इसका आश्रय करने लायक नहीं। आहाहा! एक ओर ऐसा कहे और एक ओर भगवान की प्रतिमा की पूजा के भाव की बात करे। आहाहा! भगवान! स्याद्वाद की शैली कोई अलौकिक है। यह अन्तर में समझना, वह चीज़ कोई अलौकिक

है। आहाहा! क्या कहा? आहाहा! मार्ग बहुत अलग है, बापू! केशुभाई है न? वे तो हैं न? जानते हैं। उनके मकान में रहे थे न।

यहाँ परमात्मा ऐसा कहते हैं, त्रिलोकनाथ जिनेश्वरदेव की वाणी में आया और अनुभव में मुनि को आया, वे मुनि ऐसा कहते हैं कि मन:पर्यय वह चार ज्ञान। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मन:पर्ययज्ञान ये चार ज्ञान आत्मा में नहीं है। आहाहा! ये द्रव्य-वस्तु जो सम्यग्दर्शन का विषय है, जिसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है, उस चीज़ में उन चार ज्ञान का अभाव है। अरे रे! सुनने को मिले नहीं बेचारे को, क्या करे? सभी को.. आहाहा!

यह परमात्मा कुन्दकुन्दाचार्य, भगवान (सीमन्धर भगवान) के पास गये थे, आठ दिन रहे थे, वहाँ से आकर ये शास्त्र बनाया है। आहाहा! अभी केवलज्ञानी परमात्मा तो महाविदेह में विराजते हैं। तो कहते हैं कि चार ज्ञान की पर्याय जो सम्यक् है, वह भी आश्रय करनेयोग्य नहीं। वह चार ज्ञान की पर्याय, द्रव्य में नहीं। शुद्ध द्रव्य जो सम्यग्दर्शन का ध्येय है, जिसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है, उसमें चार ज्ञान का भी अभाव है। आहाहा! तो दया, दान, व्रत, भक्ति, तप के परिणाम तो शुभराग जहर जैसे हैं, वे तो कहीं दूर रहे गये। आहाहा! कठिन बात, प्रभु! वीतरागमार्ग कोई (अलग है)।

अनन्त काल में अनन्त भव किये। दिगम्बर साधु अनन्त बार हुआ। आहाहा! श्वेताम्बर साधु तो साधु ही नहीं। जैनदर्शन में यह बात स्वीकार नहीं की, परन्तु दिगम्बर साधु अनन्त बार हुआ।

**मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायौ**
**पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायौ।**

मुनिव्रत धारण किया, पंच महाव्रत लिये। अट्ठाईस मूलगुण पालन किये, नग्नपना लिया। पंच महाव्रत निरतिचार पालन किये, परन्तु वह तो राग है। भगवन्त! महाव्रत वह राग है, दु:ख है, आस्रव है। आहाहा! उसका तो आश्रय करने योग्य है ही नहीं, परन्तु चार ज्ञान की उत्पत्ति हुई हो, उसका भी आश्रय करनेयोग्य नहीं है। है?

**कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान और विभंगज्ञान, ऐसे भेदों के कारण अज्ञान तीन;...** वह आत्मा में नहीं। कुश्रुत, कुमति और विभंग। विभंग में सात द्वीप, सात समुद्र दिखाई देते हैं। मिथ्यादृष्टि को ऐसा क्षयोपशम होता है कि सात द्वीप और सात समुद्र देखे। वह

विभंगज्ञान भी पर्याय में है, द्रव्य में नहीं। आहाहा! समझ में आया? बातें बापू! दुनिया से बहुत अलग चीज़ है। अभी तो इतनी गड़बड़ी हो गयी है कि पूरा मिथ्यात्व का पोषण चलता है। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं कि चार ज्ञान और तीन अज्ञान, वह भी आश्रय करनेयोग्य नहीं है। पहले तो यह आ गया है कि केवलज्ञान की पर्याय भी आश्रय करनेयोग्य नहीं है, क्योंकि एक समय की पर्याय नाशवान है। प्रभु अन्दर द्रव्यस्वभाव अविनाशी त्रिकाल है। आहाहा! अनादि-अनन्त आनन्द का कन्द प्रभु, अमृत का पूर और ज्ञान के नूर के तेज का सागर.. आहाहा! उसमें तो चार ज्ञान का भी अभाव है और तीन अज्ञान का भी अभाव है। आहाहा! है?

दर्शन **चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन, ऐसे भेदों के कारण दर्शन तीन;..** है। इन तीन का भी द्रव्य में अभाव है। सम्यग्दर्शन का विषय जो अन्तर ध्रुव त्रिकाली परमात्मा, उसकी दृष्टि से-लक्ष्य से सम्यग्दर्शन होता है। अभी तो धर्म की पहली सीढ़ी, धर्म का पहला सोपान, उसमें तो चार ज्ञान और तीन अज्ञान का भी अन्तर में अभाव है। उस पर दृष्टि करने से (सम्यग्दर्शन होता है)। समझ में आया? यह तुम्हारे संसार की बहियाँ नहीं हैं। यह दूसरे प्रकार की बहियाँ हैं। धन्नालालजी! आहाहा!

ये दर्शन की तीन पर्याय अन्दर उत्पन्न हुई। चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, पर्याय में है, परन्तु वह पर्याय, जैसे पानी का दल होता है, मण-दो मण पानी (होवे) उसमें तेल की बूँद हो। उस तेल की बूँद का पानी में प्रवेश नहीं है। इसी प्रकार भगवान आत्मा एक समय में नित्यानन्द, सच्चिदानन्द प्रभु में ये चार ज्ञान, तीन अज्ञान और तीन दर्शन ऊपर-ऊपर तैरते हैं। पानी के दल में जैसे तेल की बूँद ऊपर तैरती है, वैसे द्रव्य के ऊपर पर्याय तैरती है। उस पर्याय का अन्दर में प्रवेश नहीं है। आहाहा! अरे! ऐसी बात! सम्यग्दर्शन की पहली दशा.. अभी तो चौथा गुणस्थान। श्रावक तो कहीं रह गये, बापू! वे तो है कहाँ अभी? पाँचवाँ गुणस्थान और मुनिपना? वह चीज़ तो लोगों ने सुनी नहीं। यहाँ तो अभी सम्यग्दर्शन की पर्याय, वह जिसके आश्रय से और ध्येय से उत्पन्न होती है, उसमें ये तीन दर्शन और चार ज्ञान तथा केवलज्ञान का भी अभाव है। आहाहा! ऐसी बात है।

अब यह एक नयी बात आयी। **काललब्धि,...** देखो! है? काललब्धि अर्थात्? पाँच के नाम आते हैं? क्षयोपशमलब्धि, करणलब्धि, देशनालब्धि, विशुद्धिलब्धि

(प्रायोग्यलब्धि), ये पाँच बोल हैं। सम्यक्त्व प्राप्त करने से पहले पाँच बोल आते हैं, परन्तु उन बोल का आश्रय करने से नहीं। आहाहा! उसमें एक क्षयोपशमलब्धि आती है। सम्यग्दर्शन होने से पहले क्षयोपशमलब्धि होती है, उसे यहाँ काललब्धि कहा है। आहाहा! क्षयोपशम किसे कहना और काललब्धि किसे कहना? अरे! भगवान! अनादि से भ्रमणा में भूला पड़ा है। आहाहा! कहीं बात रह गयी। आहाहा! और चार गति चौरासी में नरक और निगोद। आँधी में जैसे तिनका उड़ता है, वैसे मिथ्याश्रद्धा से चौरासी लाख के भव में तिनके की भाँति उड़ता है। पर्याय के आश्रय से भी विकल्प उठता है तो यहाँ तो अभी दया, दान, और व्रत-तप और भक्ति से धर्म होता है, (ऐसा मानना तो) बड़ा मिथ्यात्व है। आहाहा! समझ में आया? यह बात तो ऐसी है। भगवान के घर की बात तो ऐसी है भाई! दुनिया को तो सुनने मिलना मुश्किल पड़े - ऐसी है। दुनिया की खबर है। आहाहा!

यहाँ शरीर को तो ९० वर्ष हुए। ६८ वर्ष तो दुकान छोड़े हुए हैं। ६८ वर्ष। इसका अभ्यास तो दुकान के ऊपर से था। अभी बड़ी दुकान है। पालेज है न? पालेज। भरुच और बड़ोदरा के बीच। अभी भी बड़ी दुकान है। चालीस लाख रुपये हैं। चालीस लाख की दुकान, एक वर्ष की चार लाख की आमदनी। भरुच (और बड़ोदरा के बीच) पालेज है, तो दुकान के ऊपर मैंने भी पाँच वर्ष धन्धा किया था। १७ वर्ष की उम्र से लेकर २२ वर्ष की उम्र तक। २२ वर्ष में मैंने छोड़ दिया। मैंने तो कहा भाई! यह तो अकेला पाप है। इसमें कोई धर्म तो नहीं परन्तु पुण्य भी नहीं। अकेला पाप। पूरे दिन धन्धा करना, ऐसा करना.. ऐसा करना... धन्धे का व्यापार, अकेला पाप और थोड़ा समय मिले, उसमें छह-सात घण्टे नींद में जायें, वह भी पाप। थोड़ा समय मिले वह स्त्री-पुत्र को प्रसन्न करने में, भोग में जाये। अर र र! पाप। धर्म तो कहीं नहीं परन्तु पुण्य का भी ठिकाना नहीं। आहाहा!

यहाँ तो परमात्मा कहते हैं कि पुण्यभाव, शुभभाव है, दया, दान, व्रत, तप, भक्ति, उस शुभभाव का तो द्रव्य में अभाव है और वह शुभभाव कर्म के निमित्त से उत्पन्न हुआ, ऐसा भी नहीं। आहाहा! अरे रे! यह कहाँ सुनना? बापू!

यहाँ तो काललब्धि कहते हैं। पण्डितजी! मुनि का इतना जोर है कि काललब्धि से होता है, उसका लक्ष्य छुड़ा दे, ऐसा है। आहाहा! होता है तो काललब्धि से परन्तु कहते हैं कि उसका लक्ष्य छोड़ दे; नहीं तो इसे तो क्षयोपशमभाव कहा था। सिद्धान्त में दूसरी जगह क्षयोपशमभाव कहते हैं। क्षयोपशम अवस्था। यह क्षयोपशम की बात चलती है।

इसमें काललब्धि को क्षयोपशम कहा है। उस काललब्धि का भी स्वरूप में तो अभाव है। आहाहा! समझ में आया? आहाहा!

हम तो पहले से कहते हैं कि काललब्धि का ज्ञान कब होता है? कि स्वरूप चिदानन्द भगवान पूर्णानन्द का अनुभव हो, तब काललब्धि का सच्चा ज्ञान होता है। आहाहा! समझ में आया? यहाँ तो (संवत्) १९७२ के वर्ष से हम कहते हैं। १९७२ के वर्ष से। ६३ वर्ष हुए, ६३। आहाहा! काललब्धि का अर्थ यदि कोई ऐसा कहे कि होना होगा तब होगा, अपने कुछ करना नहीं। स्वभाव का पुरुषार्थ करना नहीं। वह काललब्धि धारणा में ली तो उससे क्या हुआ? परन्तु वह काललब्धि.. मुनिराज को बहुत तीव्र पुरुषार्थ है। पद्मप्रभमलधारिदेव मुनि हैं, बहुत पुरुषार्थ। काललब्धि तेरे स्वरूप में नहीं। आहाहा!

तेरा स्वरूप की दृष्टि करने से सम्यक् अनुभव होता है, जब समकित होता है, तब अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आता है। चौथे गुणस्थान में समकित। अभी पाँचवाँ, छठवाँ गुणस्थान तो कहीं रहा, बापू! वह तो बहुत आगे बात है। अभी यहाँ तो चौथे गुणस्थान में काललब्धि का लक्ष्य छोड़कर, मेरी चीज़ अन्दर पूर्णानन्द है, उसका आश्रय करने से जो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है, उसमें अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आता है। ऐसा का ऐसा समकित मान ले कि यह समकित है, ऐसी बात नहीं है। अतीन्द्रिय आनन्द भगवान आत्मा में पूर्णानन्द पड़ा है। अतीन्द्रिय अमृत का रस पड़ा है, प्रभु! उसके स्वाद का अंश काललब्धि का लक्ष्य छोड़कर, द्रव्यस्वभाव की दृष्टि करे, (तब आता है)। आहाहा!

अन्तर भगवान पूर्णानन्द का नाथ (है)। सर्वज्ञपर्याय जो परमात्मा को प्रगट हुई, तो वह सर्वज्ञस्वभाव में से हुई है। आत्मा में सर्वज्ञस्वभाव पड़ा है। अरे रे! कहाँ माने? कहाँ सुने? आत्मा में सर्वज्ञस्वभाव अन्दर में पड़ा है। उस स्वभाव का लक्ष्य करने से काललब्धि का भी लक्ष्य छूट जाता है। गोम्मटसार में काललब्धि को क्षयोपशम कहा है। काललब्धि को क्षयोपशमलब्धि कहा है। क्षयोपशम, उसका भी द्रव्य में तो अभाव है। आहाहा! यहाँ आचार्य की तो तीव्र पुरुषार्थ की जागृति है, तो काललब्धि भी स्वरूप में नहीं। तब काललब्धि परलक्ष्य करना नहीं। आहाहा! कठिन बात है, बापू! वीतरागमार्ग... परमेश्वर जैनेश्वर की बात कोई अलौकिक है। अभी सम्प्रदाय में तो यह बात ही नहीं है। व्रत करो, अपवास करो, तपस्या करो, यह त्याग करो और वह त्याग करो! पर का त्याग और पर का ग्रहण, यह तो मिथ्यात्व का पोषण है। सूक्ष्म बात है, प्रभु! कठिन बात है। आहाहा!

यहाँ तो काललब्धि पर जरा वजन है। काललब्धि कलश-टीका में बहुत आती है और पाँच समवाय में काललब्धि है भी सही। पाँच समवाय है न? पाँच समवाय की भी खबर नहीं होती। पाँच समवाय क्या है? आहाहा! काल, नियति, भवितव्यता, यह सब नियति में जाता है। और पुरुषार्थ, स्वभाव तथा निमित्त का अभाव-ऐसे एक समय में पाँच कारण हैं। आहाहा! तो इन पाँच कारण में काललब्धि का भी लक्ष्य छोड़ दे, ऐसा कहते हैं। आहाहा! सूक्ष्म बात है, भाई! दुनिया को तो जानते हैं। पूरी दुनिया क्या है, (खबर है)। यहाँ तो ९० वर्ष हुए। ६७ वर्ष तो दुकान छोड़ी और दीक्षा ली, उसे हुए। ६० और ७। यह तो एक ही धन्धा है।

यहाँ परमात्मा त्रिलोकनाथ जिनेश्वरदेव ऐसा कहते हैं कि काललब्धि तेरी चीज़ में नहीं है। आहाहा! मुनिराज की दशा तो देखो! मुनि होते हैं, वे तो नग्न होते हैं और अन्तर में निर्विकल्प आनन्द की दशा का उग्र संवेदन मुनि को होता है। उसे यहाँ जैनदर्शन में मुनि कहते हैं। अन्तर में स्वसंवेदन में अतीन्द्रिय आनन्द। सम्यग्दृष्टि हुई, धर्म की पहली दृष्टि, उसमें अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आता है। सच्चा श्रावक पाँचवें गुणस्थान में जाता है... यह वाड़ा के श्रावक, वे श्रावक-वावक नहीं हैं। पाँचवें गुणस्थान में जाते हैं... ऐई! धन्नालालजी! आहाहा! भाई रतनलालजी आनेवाले हैं, कहते हैं। रतनलालजी हैं न? वे आनेवाले हैं। उनके पास पाँच-छह करोड़ रुपये हैं। पाँच-छह करोड़ धूल है। उस धूल को अपनी माने, वह तो मिथ्यादृष्टि मूढ़ है। पैसा मेरा है और लक्ष्मी मेरी है, वह तो मिथ्यादृष्टि जैन ही नहीं, अजैन है। आहाहा! कठिन बात है, बापू!

यहाँ तो प्रभु ऐसा कहते हैं कि काललब्धि-जिस समय में होगा, तब होगा। सम्यग्दर्शन भी जिस समय होनेवाला होगा, वह काललब्धि से होगा। आहाहा! परन्तु कहते हैं, प्रभु! तेरी प्रभुता पर दृष्टि दे, वह पर्याय काललब्धि से लक्ष्य छोड़ दे। आहाहा! समझ में आया? ऐई! भभूतमलजी! ये सब करोड़पति बैठे हैं। दो-दो करोड़, पचास लाख और धूल लाख सब पैसेवाले हैं। आहाहा! धूल पैसेवाले हैं? यहाँ तो कहते हैं कि काललब्धिवाला भी आत्मा नहीं। आहाहा! अरे प्रभु! सम्यग्दर्शन कोई वीतराग का...

धर्म की पहली सीढ़ी सम्यग्दर्शन, समकित। आहाहा! उस समकित का विषय जो त्रिकाली शुद्धभाव है न? ऊपर लिखा है। शुद्धभाव कहो, या द्रव्यस्वभाव कहो या त्रिकाली आननद का नाथ, महा अखण्डानन्द नाथ परमस्वभाव परमपारिणामिकभाव, वह सम्यग्दर्शन

का विषय है, तो उस सम्यग्दर्शन के विषय में काललब्धि का अभाव है। आहाहा! हम तो बहुत वर्ष से कहते हैं कि भाई! काललब्धि... काललब्धि... कहते हो तो तुम्हें क्या धारणा करनी है? इस काल में हुआ तो इस काललब्धि का ज्ञान कब होता है? कि स्वद्रव्य के आश्रय से ज्ञान हो तो काललब्धि का ज्ञान होता है। लालचन्दभाई! आहाहा! लोग बहुत कहते हैं। कोई ऐसा कहते हैं। सुनो, प्रभु! होता है तो काललब्धि से; जिस समय होनेवाला है, तब होगा, आगे-पीछे नहीं होगा परन्तु उस काललब्धि का लक्ष्य छोड़कर द्रव्यस्वभाव का ज्ञान होता है, तब जिस समय होना होगा, उसका ज्ञान होता है। अरे रे! ऐसी बात! प्रभु की कहाँ करना?

जिनेश्वरदेव त्रिलोकनाथ सीमन्धर परमात्मा तो विराजते हैं। पाँच सौ धनुष (की देह है), करोड़पूर्व की आयुष्य है। कुन्दकुन्दाचार्यदेव दो हजार वर्ष पहले वहाँ गये थे। दो हजार वर्ष पहले, संवत् ४९ (में गये थे)। वहाँ से आकर यह शास्त्र बनाया है। समझ में आया? श्वेताम्बर के शास्त्र तो कल्पित हैं। स्थानकवासी और मन्दिरमार्गी के जो शास्त्र हैं वे तो कल्पित बनाये हैं। भगवान के नहीं, सम्यक्त्वी के नहीं। अरे रे! जगत को यह कठिन पड़ता है। ऐई! भभूतमलजी! इन्हें जाति से बाहर करते थे। इनके पास दो करोड़ रुपये थे। इस ओर आये न तो जाति से बाहर करते थे। चालीस हजार देकर रखे हैं, परन्तु प्रेम तो यहाँ रह गया। चालीस हजार देकर जाति में रहे। आहाहा! धूल में नहीं। भाई! तुझे खबर नहीं, नाथ! यहाँ तो काललब्धि बहुत अलौकिक बात है।

गोम्मटसार में और दूसरे शास्त्रों में उसे क्षयोपशमलब्धि कहा है। पण्डितजी! यहाँ उसे काललब्धि कहा है। आहाहा! जिस समय में जो सम्यग्दर्शन होनेवाला है, वह होगा, परन्तु उसकी पर्याय का ज्ञान कब होता है? कि त्रिकाली द्रव्य भगवान पूर्णानन्द के नाथ का अनुभव हो, तब पर्याय का ज्ञान सच्चा होता है। आहाहा! कहो, कपूरचन्दजी! ऐसी बात कहीं सुनी भी नहीं। अलौकिक! पैसे तो बहुत हैं। ४०-४०, ५०-५० लाख वाले सब हैं। धूल-धूल, पुद्गल, मिट्टी। आहाहा! यह (शरीर) मिट्टी है तो वह मिट्टी तो क्या?

अरे प्रभु! शास्त्र में तो भगवान ऐसा कहते हैं कि पुण्य के परिणाम वे... आहाहा! क्लेश का शरीर है। अर र! ऐसी बात कहाँ सुने बापू? ये दया, दान, व्रत और अपवास मैं करूँ, ऐसा जो भाव है, वह क्लेश का शरीर है। क्लेशरूप शरीर है। भगवान अन्दर ज्ञानस्वरूप शरीर है। अन्दर यह, हों! अरे रे! कहाँ जँचे?

एक बार कहा था कि चार प्रकार के (शरीर हैं)। एक यह शरीर है औदारिक; एक अन्दर तैजसशरीर है; उसमें एक कार्माणशरीर-कर्म परमाणु तीन। आहारकशरीर है। आहारक, तैजस, औदारिक... देव को वैक्रियक शरीर है। पाँच शरीर हैं। इन पाँच शरीरों का आत्मा में अभाव है। आहाहा! शरीर तो जड़ है। जड़ की पर्याय का स्वरूप में तो अभाव है। एक अंगुली में, दूसरी अंगुली का अभाव है। इसी प्रकार एक चीज़ में दूसरी चीज़ का अभाव है। आहाहा! समझ में आया?

यहाँ कहते हैं, आहाहा! यह शरीर तो इसमें (आत्मा में) है नहीं। अब पुण्य और पाप के भाव, वे क्लेशरूप शरीर हैं। शास्त्र में विग्रह ऐसा पाठ है। कि पुण्य और पाप का भाव विग्रह शरीर है, विकारी शरीर है। उसका (आत्मा में) अभाव है। आहाहा! और भगवान आत्मा ज्ञानशरीर है। अन्दर चैतन्य, चैतन्यप्रकाश का पुंज, चैतन्यप्रकाश का चन्द्र; जैसे चन्द्र प्रकाशमय शीतल; उससे अनन्तगुनी शीतलता से भरा हुआ प्रभु यह आत्मा है। अरे रे! कहाँ जाये? कहाँ देखना? उसे ज्ञान विग्रह कहा है। आत्मा के स्वभाव को विग्रह का शरीर कहा है, वह चैतन्य शरीर है। पुण्य-पाप विग्रह जहर शरीर है, राग शरीर है। यह परम औदारिक आदि परमाणु पुद्गल शरीर है। इन तीनों शरीर का, राग का, पर का और पाँच शरीर का आत्मा में अभाव है। आहाहा! कहो, पन्नालालजी!

हस्तिनापुर गये थे न? नाम आया था नाम। पन्नालालजी यहाँ आये थे। आहाहा! वहाँ तो ज्ञानमती सब गप्प मारती है। व्यवहार से लाभ होता है। दिल्ली (हस्तिनापुर) में पच्चीस लाख का जम्बूद्वीप बनाती है। आर्यिका है। पच्चीस लाख का वहाँ बनाया है। वहाँ मानस्तम्भ (सुमेरुपर्वत) बनाया है। ८० फुट लम्बा, ८५ फुट, हस्तिनापुर में। अपने यहाँ ६३ फुट मानस्तम्भ है। ६३ फुट है। अभी ८५ फुट का बनाया है। बात (ऐसी करे), इससे धर्म होता है और इससे लाभ होता है। धूल में भी धर्म नहीं। आहाहा!

यहाँ तो काललब्धि आत्मा में नहीं। गजब बात करते हैं। आहाहा! क्या हो? बापू! प्रभु! तेरी चीज़ कोई दूसरी है। यह शरीर तो मिट्टी धूल है। जब लोहे की कील या चोट लगे तो ऐसा कहता है कि मेरी मिट्टी पकनी है, इसलिए पानी नहीं छुआना। तब ऐसा कहता है मेरी मिट्टी पकनी है। उसे मिट्टी कहता है और फिर ऐसा कहता है कि यह शरीर मेरा है। अरे रे! मूर्ख है। पैसा मेरा है, यह मान्यता तो मिथ्यात्व है। मिथ्यादृष्टि है, वह जैन नहीं। पैसे मेरे हैं, उस जड़ को अपना मानना, जीव में जड़ को अपना मानना, वह तो मिथ्यादृष्टि है, जैन नहीं।

**मुमुक्षु :** व्यवहार से तो है नहीं ?

**पूज्य गुरुदेवश्री :** व्यवहार से तो कहने में आता है। भाषा कहो। हम राजकोट के रहनेवाले हैं, ऐसा कहे तो क्या राजकोट इसका हो गया ? समझ में आया ?

यहाँ तो परमात्मा... आहाहा ! काललब्धि। यह जरा सूक्ष्म बात थी न, बापू ! इसलिए स्पष्टीकरण किया। यह तो आचार्य ने ही इसमें डाला है। दूसरी एक जगह आगे है। वाद-विवाद नहीं करना, वहाँ भी है। यहाँ नियमसार में है। वाद-विवाद नहीं करना, उस श्लोक में ये पाँच नाम हैं। पर के साथ वाद-विवाद नहीं करना। जैन हो या अन्य हो, क्योंकि चीज़ कोई अलौकिक है। वह चीज़ लोगों को सुनने को मिली नहीं, अतः तुम किसके साथ वाद करोगे ? है ? आगे है। कौन सी गाथा है... है न कुछ ? ऐसा पाठ है। १५६ ? गाथा, देखो !

'**णाणाजीवा णाणाकम्मं णाण विह**' है ? उसमें यह बात है। समझ में आया ? '**काल, करण, उपदेश, उपशम और प्रायोग्यतारूप...**' अन्तिम लाईन है, उसमें ये पाँच शब्द पड़े हैं। है ? क्या है ? '**प्राप्तिरूप लब्धि काललब्धि, करणलब्धि, उपदेशलब्धि, उपशमलब्धि और प्रायोग्यतारूप...**' जो शब्द यहाँ हैं, वे ही वहाँ हैं। तो कहते हैं कि जीव अनेक प्रकार के हैं, प्रभु ! तू किसके साथ वाद करेगा ? लोगों की सम्पत्ति, अपने पैसे, जहाँ-तहाँ पड़े वह मानते हैं। तू किसके साथ यह वाद करेगा ? क्योंकि काललब्धि भिन्न है, उनकी करणलब्धि भिन्न है, क्षयोपशम भिन्न है... आहाहा ! उनकी देशनालब्धि भिन्न है, विशुद्धि भिन्न है। आहाहा ! अरे रे ! प्रभु ! क्या करे ?

वाद-विवाद नहीं करना, उसमें यह आया है। किसके साथ (वाद) करता है तू ? यह बात किसे जँचेगी ? किसे जँचेगी यह बात ? अज्ञानी पूरे दिन पाप करता है। अभी धर्म का तो ठिकाना नहीं, पुण्य का भी ठिकाना नहीं। आहाहा ! उसे तू यह कहे कि तुझमें क्षयोपशम ज्ञान की पर्याय और केवलज्ञान की पर्याय, द्रव्य में नहीं है। उसका माप कहाँ से करेगा वह ? समझ में आया ? आहाहा !

माप करने की चीज़ ही अलग है। एक बार दृष्टान्त दिया था। रविवार का दिन था। उसके पिताजी पचास हाथ कपड़ा ले आये। आलपात आता है न ? आलपात। पचास हाथ। लड़का आठ वर्ष का था। उससे कहा, बेटा ! पचास हाथ कपड़ा ले आया हूँ। उसने अपने हाथ से मापा तो सौ हाथ हुए। पिताजी ! तुम पचास हाथ कहते हो, यह झूठ बात है। यह तो सौ हाथ है। बेटा ! तेरा हाथ काम नहीं आता। तेरा माप हमारे माप में काम नहीं

आता। हमारे हाथ से मापे, वह माप सच्चा है। इसी प्रकार भगवान कहते हैं कि तेरी दुनिया की कल्पना से तू माप निकालता है, वह माप काम नहीं आता। कपूरचन्दजी! अच्छा आ गया। आहाहा! प्रभु! अन्तर की वस्तु का माप निकालना, वह कोई अलौकिक वस्तु है, बापू! अभी सम्यग्दर्शन, हों! चौथा गुणस्थान। पाँचवाँ गुणस्थान और मुनिपना तो हिन्दुस्तान में अभी कहाँ है? बापू! आहाहा! बहुत सूक्ष्म बात। आहाहा!

कहते हैं कि काललब्धि नहीं। **करणलब्धि...** करणलब्धि है? अधःकरण, अपूर्व करण, अनिवृत्तिकरण, इतने परिणाम के तीन भेद हैं। समकित दर्शन होने से पहले यह करणलब्धि (होती है)। सिद्धान्त में लेख है। वह करणलब्धि भी स्वरूप में नहीं है। अब वह तुम्हारा कान्तिलाल कहता है कि पहले समकित नहीं और करणलब्धि से समकित होता है तो शुभभाव से होता है। कान्तिलाल है न?

**मुमुक्षु :** करणलब्धि में शुभभाव...

**पूज्य गुरुदेवश्री :** शुभभाव तो है परन्तु उसका तो यहाँ अभाव है। जिसमें अभाव है, उसका आश्रय करना है? करणलब्धि से समकित होता है? आहाहा! बड़ी चर्चा है। कान्तिलाल ईश्वर है। गुजराती। बहुत पुस्तकें बनाता है, मासिक निकालता है। हमारे पास आता है। यहाँ भी आता है।

यह करणलब्धि। समकित पाने से पहले तीन प्रकार के परिणाम हैं—अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण। ये तीन प्रकार के करण अर्थात् परिणाम के प्रकार हैं। समकित होने से पहले। इस करण का भी अपने द्रव्य में अभाव है। आहाहा! सूक्ष्म बात है, भाई! पैसे के कारण निवृत्ति कहाँ है? पन्नालालजी! थोड़ी यह धूल मिले। उसमें और रतनलालजी के पास पाँच-छह करोड़ पैसा (रुपये)। इसलिए मानो हम तो बड़े भाई हैं और उनके पास बहुत पैसा है और अपने पास थोड़े हैं... परन्तु थोड़े बहुत (सब) धूल हैं। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं कि करणलब्धि का अभाव है। आहाहा! करणलब्धि सूक्ष्म बात है। सिद्धान्त में सम्यग्दर्शन होने से पहले ये करणपरिणाम आते हैं, परन्तु इन परिणामों का द्रव्य में अभाव है। आहाहा! जिसमें दृष्टि देनी है, उसमें करणपरिणाम का अभाव है। आहाहा! गजब बात है। तीन लोक के नाथ, वीतराग जिनेश्वरदेव की बातें कोई अलौकिक हैं, बापू! ऐसी बात जैन के अतिरिक्त कहीं नहीं है। आहाहा!

**उपदेशलब्धि,..** उपदेशलब्धि है न ? अर्थात् देशनालब्धि। उपदेशलब्धि का अर्थ देशनालब्धि। पाँच में देशनालब्धि आती है न ? सच्चे गुरु की वाणी सुने तो सम्यक्त्व होता है। ऐसी बात है। अज्ञानी की वाणी सुने तो तीन काल में कभी सम्यक्त्व नहीं होता है। आहाहा ! वह देशनालब्धि भी आत्मा में-द्रव्य में नहीं है। आहाहा ! वीतराग और सन्त / सच्चे मुनि, समकिती अन्तर स्वसंवेदन, आनन्द का वेदन, अतीन्द्रिय आनन्द का प्रचुर वेदन (हुआ है), उन्हें मुनि कहते हैं। उन मुनि की वाणी सुनना, वह देशना है। देशनालब्धि आये बिना सम्यक्त्व नहीं होता परन्तु उस देशनालब्धि से सम्यक्त्व नहीं होता। आहाहा ! बाबूभाई ! ऐसी बातें हैं। सूक्ष्म बात है, बापू !

यहाँ तो देशनालब्धि का स्वरूप भगवान, द्रव्य ध्रुव.. ध्रुव.. ध्रुव.. प्रभु ! नित्यानन्द प्रभु, यह उत्पाद-व्यय की पर्याय है, वह तो एक समय की दशा है। उत्पाद-व्यय की पर्याय जो केवलज्ञानादि है, वह तो एक समय की दशा है और वस्तु जो है, वह तो त्रिकाल ध्रुव है। ध्रुव नित्यानन्द प्रभु है। भगवान ने जो वस्तु देखी है, वह नित्यानन्दस्वरूप है। उसमें पर्याय है ही नहीं। आहाहा ! यह देशनालब्धि उसमें नहीं।

**उपशमलब्धि,...** इसे पाँच लब्धियों में विशुद्धिलब्धि कहा है। पाँच लब्धियाँ हैं न ? उनमें विशुद्धिलब्धि कहा है। उसे यहाँ उपशमलब्धि कहा है। गोम्मटसार आदि दूसरे शास्त्रों में विशुद्धिलब्धि कहा है। उसे यहाँ उपशमलब्धि कहा है। है ? वह आत्मा में नहीं। आहाहा ! जो सम्यग्दर्शन का विषय आत्मा है, उसमें देशनालब्धि और विशुद्धिलब्धि का अभाव है। उसमें से कान्तिलाल ऐसा कहता है कि विशुद्धिभाव से सम्यक्त्व होता है, देखो ! अरे प्रभु ! विशुद्धि के तो बहुत प्रकार हैं। शुभभाव को भी विशुद्धि कहते हैं। शुद्ध आत्मा के अवलम्बन से पवित्रता सम्यग्दर्शन प्रगट हुआ, उसे विशुद्ध कहते हैं। आहाहा ! अरे भाई ! यह चीज़ कोई अलौकिक है, प्रभु ! आहाहा ! क्या कहें ? किसे कहें ? आचार्य कहते हैं, किसके पास यह बात करूँ ? कौन सुने ? आहाहा !

श्रीमद् भी एक बार कह गये, अरे ! यह बात कहाँ करूँ ? यह तत्त्व की, सम्यग्दर्शन की बात कौन सुनेगा ? ऐसा कह गये हैं। सम्यग्दृष्टि थे। श्रीमद् राजचन्द्र गृहस्थाश्रम में थे, आत्म अनुभवी थे, सम्यग्दर्शन प्रगट हुआ था। भव का अन्त हो गया है। एकाध भव में मोक्ष जानेवाले हैं। वर्तमान में स्वर्ग में विमान में हैं, वहाँ से मनुष्य होकर मोक्ष जानेवाले हैं। वे भी एक बार कहते थे कि अरे रे ! हमारे तत्त्व की बात कौन सुनेगा ? कि राग से भी

धर्म नहीं और अन्दर ज्ञान की पर्याय प्रगट हुई, उसके आश्रय से भी धर्म नहीं। आहाहा! समझ में आया?

उपशमलब्धि अर्थात् विशुद्धि, कषाय की मन्दता। वहाँ गोम्मटसार के पाँच बोल में विशुद्धि ली है, तो विशुद्धि का द्रव्य में तो अभाव है। केवलज्ञान का अभाव है तो फिर विशुद्धिभाव की बात क्या करना? आहाहा! सेठ! वहाँ कभी सुना नहीं। ये तो प्रमुख हैं। जयचन्दजी हैदराबाद, बड़े प्रमुख हैं। हुकमचन्दजी हैं न? बीस करोड़, राजकुमार, उनके लड़के की लड़की इनके लड़के को विवाही है। इन्दौर। बीस करोड़ रुपये। उनका लड़का राजकुमार है। उसकी लड़की यहाँ है। घर तो बड़ा है, परन्तु यह अन्दर का घर बड़ा है। आहाहा!

अन्दर में भगवान.. आहाहा! इन पाँच प्रकार की लब्धि का भी उसमें अभाव है। अब इन पाँच प्रकार की लब्धि से सम्यग्दर्शन होता है, ऐसी जगत की पुकार है। ज्ञानचन्दजी! है? यहाँ तो कहते हैं कि परन्तु इस पर्याय का द्रव्य में अभाव है। अभाव है, उससे होता है? कि जो अन्दर चिदानन्द प्रभु आनन्द सहजानन्द की मूर्ति। वे स्वामी नारायण सहजानन्द कहते हैं, वह नहीं, हों! स्वामी नारायण को तो खबर भी नहीं। यह तो सहजानन्दस्वरूप अन्दर स्वाभाविक अतीन्द्रिय आनन्द का पिण्ड, ऐसा द्रव्यस्वभाव, ध्रुवस्वभाव, शुद्धस्वभाव, उसमें पाँच लब्धि का अभाव है। विशुद्धि का इसमें अभाव है। विशुद्धि का अभाव है तो विशुद्धि से सम्यग्दर्शन होता है, ऐसी बात नहीं है। आहाहा! बात जरा सूक्ष्म आयी है, भाई! गाथा एक आयी है। ४१वीं गाथा बहुत सूक्ष्म है। नियमसार, कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि मेरी भावना के लिये मैंने बनाया है। भगवान के पास गये थे और आठ दिन रहे थे। त्रिलोकनाथ। समझ में आया? आहाहा!

वे ऐसा कहते हैं कि पाँच लब्धि का स्वरूप में अभाव है। **ऐसे भेदों के कारण लब्धि पाँच; वेदकसम्यक्त्व;...** यह क्षयोपशमसम्यक्त्व सच्चा, वह द्रव्य में नहीं। आत्मा का अनुभव भोगकर सम्यक्त्व हुआ। चैतन्य भगवान पूर्णानन्द के नाथ का अनुभव होकर आनन्द का स्वाद आया और वह वेदक समकित, क्षयोपशम समकित है, परन्तु वह पर्याय में है; द्रव्य में नहीं। आहाहा! धन्नालालजी! पहले बहुत झोंके (नींद) आते थे। दोपहर को उस समय बहुत झोंके आते थे। आज तो थोड़े आये थे। ये तो परमात्मा त्रिलोकनाथ वीतराग की वाणी है, प्रभु! क्या कहें? आहाहा!

यहाँ कहते हैं कि उसमें वेदक समकित का अभाव है। वेदक चारित्र का अभाव है। आहाहा! वेदक चारित्र अर्थात् क्षयोपशम। क्षयोपशम चारित्र है, सम्यक् अनुभवसहित। आत्मा आनन्दस्वरूप का-आनन्द का स्वाद आया और स्वरूप में रमणता हुई, उसका नाम चारित्र है। तो उस चारित्र की पर्याय का भी द्रव्य में अभाव है। आहाहा! ऐसी बात है। अन्दर है या नहीं? **वेदकचारित्र और संयमासंयमपरिणति।** देखो! क्या कहते हैं? संयमासंयम श्रावक की पंचम गुणस्थान की दशा। उस पर्याय का स्वरूप में अनुभव है, आनन्द का अनुभव है और थोड़ा असंयम राग भी है। जितना अनुभव है, उतना संयम है और जितना राग है, उतना असंयम है, तो संयमासंयम पंचम गुणस्थान श्रावक, परन्तु उस पंचम गुणस्थान की दशा का भी द्रव्य में अभाव है। है? यह क्षयोपशमभाव है न? है?

**संयमासंयमपरिणति।** संयमासंयमपरिणति। पंचम गुणस्थान में जो सच्चा श्रावक है। अभी तो वाड़ा में है, वे कोई श्रावक नहीं, वे सब सावज हैं। आहाहा! अपना स्वरूप जो शुद्ध चैतन्य अखण्डानन्द प्रभु, उसमें अनुभव आनन्द का स्वाद आया और आनन्द में विशेष लीनता हुई तो पंचम गुणस्थान हुआ, तब श्रावक हुआ। वह श्रावक जितना आनन्द में लीन हुआ, उतना संयम हुआ और उसके अतिरिक्त राग आया, उतना असंयम, तो वह संयमासंयम कहने में आता है। संयमासंयम की अवस्था पर्याय में है, द्रव्य में नहीं। आहाहा! ऐई! ऐसी बात है।

पर्याय में निर्मलता सम्यग्दर्शन की हुई। समकित में चौथे गुणस्थान में अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद आया। पंचम गुणस्थान में अतीन्द्रिय आनन्द का विशेष स्वाद आया और मुनि को तो अतीन्द्रिय आनन्द का प्रचुर आनन्द आया। प्रचुर स्वसंवेदन, समयसार की पाँचवीं गाथा में है। प्रचुर स्वसंवेदन। अतीन्द्रिय आनन्द का उफान। आहाहा! जैसे समुद्र में ज्वार आता है। पानी का ज्वार (आता है)। वैसे मुनि को पर्याय में अतीन्द्रिय आनन्द का ज्वार आता है, तब इसे जैन मुनि कहते हैं। नहीं तो जैन के मुनि नहीं हैं। समझ में आया? कठिन बात है, भाई! यह कहते हैं कि संयमासंयमपरिणति द्रव्य में नहीं है। समझ में आया? यह क्षयोपशम की बात है। इस क्षयोपशम के अठारह भेद हैं। अठारह भेद की व्याख्या हुई। ये अठारह भेद पर्याय में हैं, द्रव्य में नहीं। आहाहा!

अब उदयभाव कहते हैं। **औदयिकभाव के इक्कीस भेद इस प्रकार हैं—**

**नारकगति,...** नीचे नरकगति है न? इस वस्तु में नरकगति नहीं है। नरकगति का अर्थ नारकी का शरीर नहीं। वह पर्याय में नरकगति का जो वेदन है, वह नरकगति। आहाहा! उस नरकगति का द्रव्यस्वभाव में अभाव है। भगवान पूर्णानन्द का नाथ परमेश्वर जिनेश्वर त्रिलोकनाथ ने देखा, ऐसा जो आत्मा... आहाहा! उसमें नरकगति का अभाव है। श्रेणिक राजा अभी नरक में हैं। क्षायिक समकिती हैं और तीर्थंकरगोत्र बाँधते हैं। आगामी चौबीसी में पहले तीर्थंकर होंगे। जैसे महावीर प्रभु (तीर्थंकर) थे, वैसे श्रेणिक राजा पहले नरक में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति में अभी हैं, परन्तु समकित है और समय-समय में तीर्थंकरगोत्र बाँधते हैं। तथापि कहते हैं कि वे समकिती हैं तो समझते हैं कि यह नरकगति मेरे द्रव्य में नहीं है। आहाहा! पहले नरक में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति में श्रेणिक राजा है। ढाई हजार वर्ष हुए, साढ़े इक्यासी (हजार) वर्ष रहे। वहाँ से निकलकर आगामी चौबीसी में पहले तीर्थंकर होंगे। आहाहा! तो कहते हैं कि नरक में है, तथापि समकिती ऐसा मानता है कि यह नरकगति मेरे द्रव्य में नहीं है। आहाहा!

**तिर्यंचगति,...** नरक में तो माँस, (खावे) शराब पीवे, वह नरक में जाता है और तिर्यंचगति में तिरछे भाव। तिरछे अर्थात् कषायभाव। माँस, शराब, अण्डा न खाता हो परन्तु क्रोध, मान, माया, लोभ (किये हों) वक्रता बहुत। अन्दर में वक्रता, आडोढाई समझते हो? टेढ़ापन। जिसे कषाय में वक्रता बहुत है, वह तिर्यंच होता है। मनुष्य खड़े ऐसे हैं। गाय, भैंस, गिलहरी, आड़े हैं। आड़े क्यों हैं? क्योंकि पूर्व में वक्रता बहुत की है। अपने आत्मा की वक्रता तो पर्याय में है ही परन्तु शरीर टेढ़ा हो गया है, तथापि यहाँ तो कहते हैं कि वह तिर्यंचगति और तिर्यंच शरीर आत्मा में नहीं है। आहाहा! जयचन्दजी! हैदराबाद में कभी सुना नहीं। भाग्यशाली कहलाये। ऐसे सेठ सम्प्रदाय का लक्ष्य छोड़कर आवे। बड़े अग्रसर कहलाते हैं। आहाहा! बापू! मार्ग अलग, बापू! आहाहा!

तिर्यंचगति का अभाव है। अरे! मनुष्यगति का आत्मा में अभाव है। है? मनुष्यगति, इस शरीर को मनुष्यगति नहीं कहते। यह तो जड़ है, मिट्टी है। यह कहीं मनुष्यगति नहीं। यह तो शरीर है, मिट्टी है। अन्दर में मनुष्यगति की जो योग्यता है, मनुष्यगति की योग्यता उदयभाव, वह मनुष्यगति आत्मा में नहीं। अरे! मनुष्यगति किसे कहना? मनुष्य शरीर किसे कहना और मनुष्यगति का अभाव किसे कहना?—इसकी कुछ खबर नहीं होती और सम्यग्दृष्टि धर्मी हो गया? आहाहा! समझ में आया? मनुष्यगति, यह शरीर नहीं, यह

तो मिट्टी है। यह तो मनुष्य का शरीर है। मनुष्यगति तो अन्दर में ऐसी योग्यता से मनुष्यगति का उदयभाव है, जो दु:खदायक गति है। गति दु:खदायक है। आहाहा! अब लोग ऐसा कहते हैं कि मनुष्यगति होवे तो केवलज्ञान हो। कोई नरक में, तिर्यंच में केवलज्ञान है नहीं। डाह्याभाई!

**मुमुक्षु :** बात-बात में अन्तर है।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** बात-बात में अन्तर है। 'आनन्दा कहे परमानन्दा माणसे माणसे फेर, एक लाखे तो न मले और एक त्रांविया तेर.... ' इसी प्रकार भगवान कहते हैं कि तुझमें और मुझमें बात-बात में अन्तर है। तुझमें और मुझमें कहीं मिलन नहीं है। तूने कभी मेल किया ही नहीं। समझ में आया?

यह यहाँ कहा। अपने में मनुष्यगति नहीं। आहाहा! एक पण्डित आया था। कहाँ का? कुचामन का? एक पण्डित आया था। मनुष्यगति के बिना केवलज्ञान होता है? इसलिए मनुष्यगति केवलज्ञान का कारण है। अब सुन तो सही! तू बड़ा पण्डित है तो... नाम भूल गये। काशीलालजी! लो, काशीलालजी पण्डित है न? यहाँ तो सब पण्डित भी आवे और दूसरे भी सब आते हैं। वे कहे, मनुष्यगति से केवलज्ञान होता है; इसलिए मनुष्यगति कारण है और व्रजनाराचसंहनन होवे, उसे केवलज्ञान होता है, तो संहनन कारण है। (हमने) कहा, बिल्कुल झूठ बात है।

**मुमुक्षु :** व्रजनाराचसंहनन वाला सातवें नरक में (भी) जाता है।

**पूज्य गुरुदेवश्री :** हाँ; उस समय सातवें नरक गया। ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती। छियानवें हजार स्त्रियाँ, छियानवें करोड़ सैनिक, सोलह हजार देव सेवा करे, वह मरकर अभी सातवें नरक में है। ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती अभी सातवें नरक में है। अभी पिच्यासी हजार वर्ष नरक में व्यतीत हुए हैं। अभी तो असंख्य अरबों वर्ष वहाँ रहनेवाला है। अन्तिम चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त। सम्यग्दर्शन तो नहीं परन्तु मिथ्यादर्शन में भी महा.. माँस, शराब, महापाप। स्त्री.. स्त्री.. स्त्री.. स्त्री.. कुरुमती एक स्त्री थी। छियानवें हजार स्त्रियों में एक मुख्य स्त्री (रानी) होती है, तो उस स्त्री का इतना प्रेम कि मरते हुए कुरुमती.. कुरुमती.. (करते हुए) मरकर सातवें नरक में गया। अभी सातवें नरक में है। परन्तु वह गति भी पर्याय में है; वस्तु में नहीं।

विशेष कहेंगे..... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)